रंगों की भाषा के ये उस्ताद

डॉ0 सुनीता शर्मा,

असिस्टेंट प्रोफेसर–ललित कला विभाग,
डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,लखनऊ

चित्रकला की हमेशा से एक अर्न्तराष्ट्रीय अपील रही है। साहित्य की तरह अभिव्यक्ति का यह माध्यम भाषा के फ्रेम में कैद नहीं रहता। देश और काल की सीमा से परे भारतीय चित्रकला को अब विश्व के पटल पर काफी सम्मान से देखा जा रहा है। विदेश की गैलिरियां यहाँ के कलाकारों की प्रदर्शनियां करने में अब पहले की तरह नहीं हिचकती तो इसके पीछे भारतीय कलाकारों का एक लम्बा संघर्ष रहा है। विश्व के बाजार में इस देश की कला पर नीलामी का हथौड़ा उसी जोश–खरोश से बजता है तो लोग इस उम्मीद के पीछे जो कुछ भरोसे के नाम हैं, चाहे वह बाजार के लिये हो या किसी शुद्ध कला प्रेमी के लिये उसमें मकबूल फिदा हुसैन और अर्पणा कौर नाम पहली पंक्तियों में शुमार किया जाता है।

मकबूल फिदा हुसैन–'वे खबर बनकर दिल में उतरते है'

उन्हें विवाद को मित्र बनाने की कला भी आती है। लोग उन्हें कूची का कूबेर कहते है। उम्र के पड़ाव में भी वे मैदान में डटे रहते थे, तो इसका बड़ा कारण यह है कि वे मकबूल फिदा हुसैन हैं। उनके विरोधी भी इन्हें कला का भारतीय पैमाना स्वीकारते हैं। विवाद को मित्र की तरह स्वीकार करने वाले इस शख्स को असफलता निराश नहीं करती। वे जो भी करते हैं खबर बनती है। हुसैन प्रयोग के लिये भी जाने जाते हैं। सच यह भी है कि सम–सामयिकता को इस कलाकार ने जिस अनूठे ढंग से भोगा है, उसी अनूठे अंदाज में उसे अपनी कला में अभिव्यक्ति भी दी है। हुसैन उन गिने–चुने कलाकरों में है, जो युद्ध आदमी के चांद पर जाने, गावस्कर के शतक लगाने, अमिताभ किसी फिल्म के हिट होने से लेकर सफदर हाशमी की हत्या जैसे मामलों पर अपने चित्रों के जरिए त्वरित प्रतिक्रिया व्यक्त करते रहे हैं। लोकप्रिय या बड़े व्यक्तियों के कार्यों और व्यक्तियों से रिश्ता बनाना शुरू से ही हुसैन का शगल रहा है। गांधी, नेहरू, इंदिरा, मदर टेरेसा, सत्यजीत राय, राममनोहर लोहिया, गजानन माधव, मुक्तिबोध, कैफी आजमी से लेकर माधुरी दीक्षित और अब सुष्मिता सेन, तक की कला यात्रा हालांकि अवश्य विवादास्पद रही, पर यह उनके कला संसार का एक छोटा सा हिस्सा है।

हुसैन ने हजारों की संख्या में चित्र, स्केच, रेखांकन, लोगो, पुस्तक आवरण बनाए, खिलौने और फर्नीचर भी बनाए, आभूषण और बर्तन भी म्यूरल और फिल्में भी। उनकी फिल्म ''थ्रू द आईज़ आफ ए पेंटर'' को 1967 के बर्लिन फिल्म समारोह में विशिष्ट पुरस्कार मिल चुका है। आपके मतानुसार महान कला आधुनिक या प्राचीन नहीं होती। अर्थात उसे किसी समय विशेष की सीमा में नहीं बांधा जा सकता। वह चिरन्तन होती है तथा उन विशेषताओं को लेकर सदा फलती–फूलती है जो उसे शाश्वत और अमर बनाते है। ''एक कलाकार की निष्ठा व उन्मुक्त भाव से मुक्तकला के धनी है।''

वस्तुतः हुसैन आधुनिक भारतीय कला के अर्न्तराष्ट्रीय प्रतीक है। रूपाकारों का मूर्तिव्यंजक भाव, बेबाक रंग, धारा प्रवाही सशक्त रेखांकन, नूतन कल्पना, सामाजिक विषय, वस्तुओं

का घनत्व, रंगों की मोटी सतह ने तीव्र व्यंजकता द्वारा आकृतियों का सहज निर्माण तथा चित्रण की सादगी व प्रबल भावाभिव्यंजना, हुसैन की कला अद्भूत विशेषताएं है। विषय की दृष्टि से आपकी कला विस्तृत रही, जिसमें नारी के विविध रूप, अनावृत्ताएं, व्यक्ति चित्र, दृश्य चित्र, पशु (विशेषतः घोड़ा व बैल) पक्षी चित्र प्रमुख हैं। लगातार की सक्रियता उन्हें चमत्कारी बनाती है। उन्होंने एक पेटिंग मकड़ी और लैंप शीर्षक से बनाई और आज तक कहा जा रहा है कि पश्चिम के मुहावरे से मुक्त होने की दिशा में यह उनका पहला कदम था, सिर्फ हुसैन का नहीं भारतीय कला का भी, इमरजेंसी के दौरान जब इंदिरा गांधी को उन्होंने दुर्गा के रूप में चित्रित किया और पांच लाख में वह पेटिंग बिकी तो कला और बाजार के रिश्ते पर लंबी–लंबी बहस छिड़ गयी।

बहस के केन्द्र में हुसैन ही थे। हुसैन की कला में मौजूद विविधता लोगों को एक रहस्य की तरह लगता था। हुसैन की कला सदैव विवादित रही। यह जानना कठिन है कि आपकी आगामी कृति अलंकारिक होगी, साहसी होगी या सशक्त। वस्तुतः हुसैन ने यथार्थ व अमूर्तन को अत्यन्त आकर्षक तरीके से संश्लेषित किया है। हुसैन की कला भारतीय समकालीन कला इतिहास से घटित हुये, सभी परिवर्तन की साक्षी है जिसमें यर्थाथ्वादी ब्रिटिश, अकादमिक परम्परा तथा आधुनिक विरूपण सभी रूपायित हुये है। वर्तमान में भी हुसैन सजग व जिज्ञासु हैं तथा नित नवीन कला प्रयोगों में रत है।

अंजली इला मेनन–'खिड़की है जो बहुत कुछ कहती है'

उनकी कला इनके पूरे वातावरण को अभिव्यक्त करती है। मुंबई में घर की छतों पर कौवे आते थे तो वे कौवे कैनवास पर भी नजर आते थे। अनुभव को कला में बदलने की कला अंजली को एक नई पहचान दिलाती है।

सन् 1940 में जन्मी अंजली का कला के क्षेत्र में पदार्पण मात्र सत्रह वर्ष की आयु में हुआ। शुरुआत उन्होंने गोल आंखों वाला पोट्रेट बनाकर की और फिर एक व्यग्र–सी दिखने वाली लड़की को उकेरा। अंजली बताती है–यह वह काम है, जो मैंने कोई पैंतालीस साल पहले किया था। यह पैंतालीस साल पहले का मेरा किया गया काम, पैंतालीस साल के मेरे सैंपल हैं। हालांकि यह मेरे काम का केवल एक छोटा–सा हिस्सा ही है। लेकिन इनसे कुछ यादगार अनुभूतियां जुड़ी हुई हैं।

कला में होने वाले नित नए प्रयोगों को लेकर वह कहती हैं, 'मुझे आज भी याद है कि किसी ने एक बार मुझे मोरानो (ग्लास के काम के लिए प्रसिद्ध) जाने की सलाह दी। मैं इस सुझाव को सुनकर उछल पड़ी मैंने बड़ौदा में लगने वाले एक आर्ट कैंप में ग्लास पर चित्रकारी के प्रयोग किए। इतना ही नहीं पहली दफा अम्ललेखन (इचिंग) भी किया। मैंने अपनी पेंटिग में सालों तक खिड़की को उकेरा और कौवे को भी। लेकिन यह तब की बात है जब मैं मुंबई में रहा करती थी और कौवे वहां के वातावरण का एक हिस्सा हुआ करते थे। दिल्ली में मेरे घर के आस–पास या फिर मुंडेर पर कौवे कम ही नजर आते हैं। इस तरह से कई चीजें खुद–ब–खुद बदल जाती हैं। जब में कैंटोनमेंट में रहा करती थी, तब मैंने छिपकली को अपनी कई पेंटिग में दर्शाया क्योंकि वह वहां अक्सर दिखाई देती थीं और इस तरह से मेरी जिंदगी का एक हिस्सा बन गई थी। तो इस तरह से कुछ चीजें एक निश्चित चरण के लिए आपके आगे आती हैं। और फिर खुदही खत्म भी हो जाती हैं। तो क्या कला के किसी नमूने को किसी की जिंदगी में जो कुछ होता है, वह उसकी पेंटिग का एक हिस्सा बन जाता है। अब देखिए मेरे बच्चे हैं, तो मैंने कई ऐसी पेंटिग बनाई है कि जिसमें मेडोना के साथ शिशु को दर्शाया गया है। मेरी नग्न पेंटिग भी बीते हुए समय का हिस्सा बन गई हैं। 1990 के

दौरान मैंने काफी प्रयोग किए। मैंने बोर्ड पर काफी सालों तक ऑयल का इस्तेमाल किया, फिर मैं वस्तुओं को पेंट करने लगी। यह मेरे लिए वास्तव में रूचिकर था क्योंकि यह विषयांतर था। मैंने सूटकेस से लेकर आलमारी और कुर्सी से लेकर संदूक तक की पेंटिग बनाई।'

अंजली ही वह पहली कलाकार थीं कि जिन्होंने कंप्यूटर एडिड पेंटिग का इस्तेमाल किया। वह बताती हैं, मेरे ख्याल से 1996 में मैंने इसकी पूरी एक श्रृंखला बनाई थी। मैंने दो–तीन आकृतिमूलक पेंटिग भी बनाई। मैंने मोरानो में दो–तीन साल बिताए। ग्लास पर पेंटिग की। यह मेरी जिंदगी का एक अलग चरण था। अपने नए प्रयोग किच को लेकर अंजोलि खासी उत्साहित दिखाई देती हैं। वह बताती हैं, मेरा नया प्रयोग किच को लेकर है। अब तो इसकी ऐसी लहर हो गई है कि अनेक पेंटर इसी स्टाइल में पेंटिग बना रहे हैं। यह किसी आंदोलन की तरह हो गया है। सभी लोग इस आंदोलन का हिस्सा बनना चाहते हैं। प्रश्न उठता है कि क्या किच का प्रयोग सफल होगा? मैंने लोकप्रिय कैलेंडर कला का इस्तेमाल अपने काम में करने की कोशिश की है। ऐसा करके मैंने आज के जमाने की विजुअल कैलेंडर कला के समानंतर में कुछ करने का प्रयास किया है। मुझे लगता है कि हमारे साथ समस्या यह है कि जब कभी हम कुछ देशी करने की कोशिश करते हैं, तो हमेशा पीछे की ओर मुड़कर देखने लगते हैं। ऐसा करने पर हमें अजंता, फोक कलाएं या फिर मीनिएचर ही दिखाई देते हैं। मुझे यह नहीं समझ आता कि क्यों हम समानांतर चीजों को अनदेखा करते हैं। सिनेमा पोस्टर, राजनीतिज्ञों के कट–आउट, बस या फिर रिक्शे में की जाने वाली पेंटिग। खासतौर पर करोड़ों लोगों के घरों में इस्तेमाल होने वाले कैलेंडर पर उकेरी जाने वाली आकृतियां। हम इन सभी चीजों की ओर पीठ नहीं कर सकते। ये अभी चीजें हमारे आसपास मौजूद रहती हैं। आप को उस स्किल को देखना होगा, जो इन सभी चीजों के पीछे काम करती है। मैं उन्हीं चीजों को हाइलाइट करने की कोशिश कर रही हूं। मैं इन में से कुछ फिगर को बाकियों से अलग कर रही हूं। मसलन, ज्यादातर कैलेंडर में भगवान की तस्वीर बनी होती है। मैं इन तस्वीरों के साथ तकनीक का समावेश कर रही हूं। यह काम काफी दिलचस्प है।

क्या किसी तरह का जेंडर वायस है, इस क्षेत्र में? मुझे इस बात को लेकर हमेशा ताज्जुब होता है कि एक महिला अगर पेंटिग करती है, तो लोग उसे महिला पेंटर कहते हैं। लेकिन अगर एक पुरुष पेंटिग करता है, तो उसके पुरुष पेंटर नहीं कहा जाता। मैंने अपने साथी से इसी बात पर आपत्ति जताते हुए एक दफा कहा था, जब मैं तुम्हें मेन पेंटर नहीं कह रही, तो तुम क्यों मुझे बार–बार महिला पेंटर कहे जा रहे हो? मुझे नहीं लगता कि महिला या फिर पुरूषों में किसी तरह का अंतर है। फिर भी हम महिलाओं को हाल ही के दिनों में कला के क्षेत्र में जिस तरह सफलता मिली है, तो उसे देखकर तो यही लगता है कि कई पुरूष कलाकार इस सफलता से कुढ़ रहे हैं।

अर्पणा कौर–'जीवन के छंद उनके चित्रों में'

समकालीन कला जगत में उनके चित्र इस दुनिया को खूबसूरत बनने की वकालत करते हैं। चौतरफा निगाह डालने पर आज हमारे समाज का जो दृश्य उभरता है, अर्पणा कौर के चित्र उसी के बीच से अपना रास्ता बनाते है। उन्हें कबीर अच्छे लगते हैं, सूफी गीत अच्छे लगते है। सोहनी–महिवाल की प्रेम कथा उन्हें अच्छी लगती हैं, अरावली के पहाड़ो की श्रृंखला अच्छी लगती है। पर इनसे बढ़कर खुद चित्रकार होते हुये भी उन्हें दूसरों की कृतियों भी अच्छी लगती है, यह वरिष्ठ चित्रकार अर्पणा कौर के चरित्र का हिस्सा है।

आज जब कला की दुनिया में कुछ अजूबा और ऊल–जलूल हरकतों से ख्यात होने की प्रवृत्ति चरम पर है। अर्पणा कौर की आस्था आज भी आकृतिमूलक–विषय प्रधान चित्रों में है। यह बात सच है कि अनुभव को स्मृति और स्मृति को संवेदना में बदलने के ही बाद कला का जन्म संभव है, पर यह पूरी प्रक्रिया एक खास अंदाज में अर्पणा कौर के यहाँ फिल्टर होती है, क्योंकि उनकी कला कहीं से शुष्क और नीरस नजर नहीं आती।

अर्पणा कौर बाजार के सच को पहचानती हैं, पर कभी भी उन्होंने उन खरीददारों के लिये अपने कैनवास पर एक स्त्री को जगह नहीं दी, जिनके लिये स्त्री आज भी एक उपभोक्ता सामग्री से ज्यादा कुछ नहीं। उनके कैनवास पर पहाड़ हैं, फूलों की घाटियां हैं, झूमती प्रकृति है और कोई नाचता पुरूष है तो वह महज इसलिए नहीं कि ये सारी चीजों आंखों को लुभाते हैं। उन्होंने प्रकृति को एक मनुष्य की आंखों से देखा है और उसमें समाज के चेहरे को पहचानने की कोशिश की है। 1980–81 के आसपास शेल्टर्ड वीमेन, स्टारलेट रूम, बाजार आदि चित्र श्रृंखलाओं में आम भारतीय नारी के कई पक्षों की कलात्मक परिभाषा तय की, वहीं वर्ष 1983 की उनकी चित्र श्रृंखला में लोगों ने स्त्री–पुरूष सम्बन्धों की एक नई व्याख्या को महसूस किया। 1984 के सिख विरोधी दंगे ने अर्पणा को मानो झकझोर कर रख दिया। वर्ल्ड गोज और आफ्टर द मैसकर चित्र श्रृंखला जिसने देखा होगा, वह जानते हैं कि उनकी कला में आम आदमी के लिये दुख–दर्द किस तरह जगह पाते हैं। खुद कहती है। मुझे लगता है कि चित्र में आम आदमी आये और आम आदमी को समर्पित चित्र आम आदमी तक भी पहुंचे। उनके चित्र मानवीय मूल्यों और सम्बन्धों में कहां क्या छूट रहा है, इसकी भी याद दिलाते हैं।

बचपन से शुरू हुई लम्बी कला यात्रा में कई पड़ाव आए और उतार–चढ़ाव की। देश की भी महत्वपूर्ण गैलरियों के अलावा विदेश के प्रायः सभी चर्चित शहरों में उनकी प्रदर्शनी लग चुकी है। लाखों में पेटिंग बिकती है। नाम और दाम के अलावा कला बाजार को अपनी शर्तों पर आंदोलित करने वाली अर्पणा जी को आज भी वह दिन याद है, जब मकबूल फिदा हुसैन द्वारा नये कलाकारों के लिये आयोजित एक ग्रुप शो में उन्होंने हिस्सा लिया था–''मैंने छह चित्र अपने भेजे थे, यकीन नहीं हुआ था, हुसैन साहब ने प्रदर्शनी के लिये उन चित्रों की स्वीकार कर लिया, कला दीर्घा की भव्यता आतंकित कर रही थी, मुझे। लेकिन वहाँ मेरे चित्र सराहे गये, चार बिक गये थे। और इस तरह अचानक कला की दुनिया में मेरा प्रवेश हो गया।''

कला की दुनिया में प्रवेश अचानक जरूर हुआ, लेकिन अर्पणा कौर अचानक बड़ी कलाकार नहीं हो गई। एक लम्बा संघर्ष है, जिस ढंग से चित्रित किया है, उससे ज्यादा गहरे रंगों में उन्होंने एक अकेली औरत की जिजीविषा को भोगा है, और यही कारण है कि उनकी कला अक्सर कुछ कहते सुनाई देती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- Feminism and Woman Artist in India – Gayatri Sinha

2. समकालीन भारतीय कला – डॉ0 ममता चतुर्वेदी

3. हिन्दुस्तान – रवि उत्सव – प्रीमिता वत्स 2003

4. भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास – लोकेश चन्द शर्मा

5. भारतीय चित्रकला का इतिहास – अविनाश बहादुर वर्मा

Copyright © 2017, Dr. Sunita Sharma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.